अगले मुहर्रम की तैयारी

रमेश बक्षी

अगले मुहर्रम की तैयारी

सोच रहा हूँ कि दरवाजा खुले तो जाऊँ उनके घर और पाँचेक मिनट को बैठ आऊँ। पर अजीब हैं ये कि सई-साँझ साढ़े आठ को दरवाजे भिड़ा सो गए! नहीं, यह तो मेरा सोचना है, सोए थोड़े ही होंगे, अंदर खाना-वाना खा रहे होंगे, सो बाहर का दरवाजा लुढ़का दिया। नहीं तो ऐसी धमा-चौकड़ी में किसी को नींद आती है? पर उन बेचारों को

बाजे-गाजे, जुलूस-जमासे से क्या? गम-डूबों की तो एक अलग अपनी दुनिया होती है। उनके कान में शहनाई फूँको फिर भी उन्हें सुन नहीं पड़ता। तकिये पर सिर रख पड़ा हूँ तो उठ बैठा, क्योंकि बाहर आँगन में सोया हूँ। हवा हल्के-हल्के चल रही है और मेरा सोचना लोरी सुनने-सा है। सोचना शुरू किया नहीं कि नींद आई नहीं।

इस समय कुछ-कुछ लोग करबला से लौट रहे हैं। बच्चों का है मजा तो। वे दोनों बच्चे किरकिरी खरीद लाए हैं और बजाते जा रहे हैं। मोटे पेट वाला बच्चा निकर की जेब से रेवड़ियाँ निकाल-निकाल कर चबा रहा है। वह बच्ची बड़ी प्यारी है, उम्र सातेक की और कपड़े बीसी-उम्र के। कली वाली सलवार, घुटनों से नीची कुरती और गोटा-लगी चुन्नट। माथे पर गोटा खूब चमक रहा है, इसकी पसंद भी खूब है, खरीद कर लाई है लकड़ी पर नाचने वाला बंदर, और रास्ता चलते मगन है बंदर नचाने में कि कभी लगती है ठोकर और कभी साथ-चलतों से बिछुड़ जाती है। इन बच्चों को आता देख बड़ा दर्द लगता इनको, भला है कि दरवाजा बंद कर रखा है पर, कुछ देर में दरवाजा खोलेंगे तो कुछ देर को हो जाऊँगा इनके घर। न भी जाता पर आज सवेरे उनके चेहरे देखे तब से मन आँसू-आँसू हो रहा है।

कैसा है यह बुश्शर्ट वाला बाबू भी कि हर साल इसके चेहरे पर एक-न-एक नई झुर्री आ जाती है। इसका ब्याह हुआ तब से जानता हूँ। मुझे यह कमरा किराये पर अटकाए कोई तीन साल या साढ़े तीन साल हुए होंगे। जब मैंने इस कमरे में ताला लगाया तभी था इसका ब्याह। कंपनी का एजेंट हूँ न, तो कभी सप्ताह, कभी पखवारे और कभी माह तिमाह यहाँ आता हूँ। किराया सात है इस कमरे का, सो अपने नाम पर अटका रहा है, पाँव रखने को जगह तो है, नहीं तो इस शहर में तो धर्मशाला, होटलें भी भरी रहती हैं। यह मकान तो एक चाल है। बीसेक किरायेदार तो रहते ही होंगे पर मुझे सब जानते हैं क्योंकि जब कभी मैं आता हूँ तो सबको कंपनी का कैलेंडर दे जाता हूँ। सामने चाचा रहते हैं, साल-की-साल सरकारी ताजिया ये ही बनाते हैं। एक जमाना था कि जब चालीस खन (खंड) का बनता था जातिया। शहर के सैकड़ों कंधे उसे उठाते थे और ताजिये से आध-आध फर्लांग दूर उसकी रस्सी खींची जाती थी। लोगों का मन भी छोटा होता गया और जातिये के खन भी छोटे होते गए। पहले तो इमामबाड़े में साल-भर धूम रहती थी पर अब मेंहदी की रात से पखवारे पहले कागज कटते हैं और तीन बड़े, चार छोटे खनों का जातिया आनन-फानन में खड़ा हो जाता है। चाचा को मैं जो कैलेंडर देता हूँ, उसकी तसवीर काट कर वे हर साल ताजिये में लगा देते हैं।

दरवाजा बजता है। मैं उठता हूँ, जूते पहनता हूँ पर दरवाजा नहीं खुलता। मैं जूते पहने ही बिस्तर पर अधलेटा हो जाता हूँ, हाँ पहली बार इसके ब्याह-बरस मैंने जब कैलेंडर

दिया थान तो बड़ा खुश हुआ था यह बुश्शर्ट वाला बाबू। कैलेंडर पर बनी थी एक बच्चों की तसवीर और उसकी नई दुलहिन के पैर भारी थे। एक दिन उसकी बीवी को देखा था मैंने : भरा हुआ शरीर, तेज साफ रंग और माँ बनने से पहले की गंभीरता उसके चेहरे पर थी। पशु-पक्षी की मादाएँ माँ बनने से पहले बड़ी तेज और चपल दिखने लगती हैं क्योंकि गुफा-घोंसले के प्रबंध में लगी रहती हैं वे, पर औरतें उसी दशा में होने पर भी जाने क्यों बड़ी आलसिन लगने लगती हैं। ऐसे ही आलस के भाव बुश्शर्ट वाले बाबू की भरे बदन वाली बीवी के चेहरे पर ही नहीं सारे शरीर पर थे। ...और यही भाव मुझे हमेशा उसके चेहरे पर दिखाई देता रहा। मैं सोचता कि साल में एक बच्चा भी होता होगा तो कम-से-कम तीन महीने तो इसकी हालत ठीक रहनी चाहिए, पर उन तीन महीने वह अपनी या अपने बच्चे की बीमारी में डूबी रहती होगी गले-गले कि कभी दिख ही नहीं पड़ती। ...पर इस बार तो वह वैसी नहीं दिखाई दी। ...पर बच्चा भी तो दो या ढाई महीने का ही हुआ होगा।

दरवाजे फिर बजे। मैंने उधर झाँक कर देखा, अंदर लालटेन जल रही है ओर दरवाजा खुलने का भ्रम इसलिए हो रहा है शायद कि हवा के झोंके से साँकल बार-बार हिल जाती है। होगा भी... आज नहीं कल हो जाऊँगा क्योंकि कल तो ठहरना ही है मुझे। ऐसे ही दो साल पहले भी चार दिन ठहरा था मैं यहाँ। तभी बुश्शर्ट वाले बाबू के यहाँ सोहर गूँजी थी और उसने एक पेड़ा ला कर मेरा मुँह मीठा कराया था। फिर दोबारा जब आया तो पता लगा कि वह बच्चा मर गया। जाने कौन-से रोग की बात कह रहा था बुश्शर्ट वाला बाबू कि डॉक्टर ने माँ का दूध छुड़वा देने को कहा और डिब्बे का दूध उसे रास न आया, बच्चा सूखता ही गया, एक नंगा काँटा-सा हो गया था उसका शरीर। कहता था कि दवा-दारू में हाथ नहीं खींचा, बीवी की चूड़ियाँ भी रहन के पेट में गिरफ्तार हो गईं पर वह नहीं बचा। मैं डेढ़ माह में फिर आया तो देखा कि उसकी भरे बदन वाली बीवी के पाँव फिर भारी हैं, चेहरे पर आलस पुता है और साड़ी की पटलियाँ उसके शरीर पर चाय की गोल केटली की आकृति बना रही हैं। फिर मेरे तीन-चार बार आने के बाद वह वुश्शर्ट वाला बाबू एक लड़की का बाप बन गया। उसने लड़की का कोई नाम नहीं रखा था। मैंने छह महीने की उसकी लड़की को देखा था, गुदगुदा बदन और सुंदर नाक-नक्श। उसी समय मैंने उसकी माँ को भी देखा, वह फिर उसी हालत में थी, भरा बदन और भारी पाँव, चेहरे पर आलस की रेखाएँ और पटलियों की वर्तुल रेखा। कोई पखवारे बाद जब मैं आया और उसे कैलेंडर देने गया तो पूछा, 'तुम्हारी बेबी कहाँ है?' वह कुछ नहीं बोला। मैंने जब फिर पूछा तो वह इतना कह कर अंदर चला गया - 'मर गई' कहना अच्छा नहीं लगता। मैं बड़ा दुखी हो गया। चाचा से पूछा तो बोले, 'इसकी बीवी के दूध में कोई खराबी है। उसकी बच्ची अच्छी-भली थी पर एकदम सूख गई और

चल बसी।' चाचा कह रहे थे, 'इस बार इमाम हुसैन की मिन्नत मनवा दी है। चारेक रुपयों का एक ताजिया बनवा कर उससे रेवड़ी बँटवा दूँगा...।'

अब तो दरवाजा खुल ही गया। कौन है यह? बुश्शर्ट वाला बाबू ही तो है, पर यह तो बड़ा खुश दिख रहा है... इतना ही खुश दो-ढाई महीने पहले भी तो था जब इसके घर पलने में तीसरा बच्चा आया था। लड़के की खुशी उसके चेहरे पर तो आ गई थी पर उसने कहा था मुझे, 'इस बार हम कोई खुशी नहीं मना रहे हैं, इसलिए कि बच्चे को नजर न लग जाए।' मैंने हमदर्दी से उसके कंधे पर हाथ रख दिए थे और मेरा जी हुआ था कि इसे नए छपे कैलेंडर का एक और डिजाइन दे दूँ। मैंने केवल इसी बार उसकी बीवी के पाँव हलके देखे। जाने क्यों मेरा जी हुआ कि इसे कोई नेक सलाह दे दूँ कि बीवी की सेहत का भी थोड़ा ख्याल रखा करो। मिसाल के रूप में मैं स्वयं को ही रखना चाहता था कि मैंने तीन बच्चों का बाप बनते ही डॉक्टर की सलाह मान ली, पर कुछ बोला नहीं क्योंकि दरवाजे में खड़ी उसकी बीवी दिख गई थी और उसकी साड़ी की पटलियाँ पैर के अँगूठे को छूती हुई सीधी लकीर बना रही थीं। वह मुझ से बोला था, 'मेरी जिंदगी में मेरी बीवी के अलावा कोई और नहीं है।' मैंने मजाक किया था, 'और हर साल आने वाले बच्चे का जिक्र क्यों नहीं करते?' उसे इस प्रश्न ने जरूरत से ज्यादा गंभीर बना दिया था। उसके चेहरे की झुरियाँ दर्द से वैसे ही ऐंठ गई थीं जैसे भीगने पर सन की रस्सी। वह बोला था, 'हर साल आने वाले बच्चों का आना मैं कैसे रोकूँ? नहीं रोक सकता, क्योंकि उन बच्चों के चले जाने का गम भी तो मुझे गलत करना पड़ता है।' मैंने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया था।

लो मैं इसके घर जाने वाला था और इस भले आदमी ने फिर दरवाजा बंद कर लिया है। चाहूँ तो अपने कमरे से उसके कमरे को जोड़ने वाले सदा बंद दरवाजे की सेंध में से देख सकता हूँ कि वह क्या कर रहा है अंदर। पर ऐसा करना किसी की पीड़ा का मजाक उड़ाना होगा और मैं कंपनी का एजेंट हूँ तो हूँ पर किसी के दर्द को संदेहक आँखों से देख कर उसकी गहराई पर विश्वास नहीं करूँगा। मैं फिर बिस्तर पर अधलेटा हो गया हूँ। इस बार यहाँ बहुत रहा हूँ। परसों किसी भी हालत में लौट जाना होगा। हेड ऑफिस में सारा आकाउंट देना है और आर्डर सप्लाई करवाने हैं। इन दिनों यहाँ कटी मजे में। मेहँदी की रात तो ऐसा जी हुआ कि मैं भी गाने लगूँ। इमामबाड़े में खूब रोशनी हो रही थी। ताजिये के खन जगमग-जगमग कर रहे थे और गूगल की धूनी दूर तक फैल रही थी। इस बार खूब रेवड़ियाँ खाई हैं और चाचा के साथ रतजगार की है। कल बादल घिर आए। बुश्शर्ट वाले बाबू का बच्चा महीने-ऊपर से रोंव-रोंव कर रहा था। पिछले बच्चे की तरह वह भी सूख गया और कल जब कत्ल की रात थी तो वह नहीं रहा। किसी

फिल्म में एक के बाद एक मौत जब देखता हूँ तो उसकी कहानी लिखने वाले को वैसी अस्वाभाविकता के लिए गाली दिए बिना नहीं रहता पर असल जिंदगी में जब ऐसा हो तो किस कहानीकार को गाली दूँ? मुझे उस क्षण सारी दुनिया सिर झुका कर बोझ ढोने वाले गधे की तरह लगती रही। मैं शहर गया था। लौटा तो बुश्शर्ट वाले बाबू के तीसरे बच्चे का गुजर जाना सुना। दिन में चाहा था उसके घर हो आऊँगा।

अब फुरसत में हूँ, जा सकता हूँ उसके घर पर दरवाजा बंद किए हैं वह तो। बेचारे दोनों सिर से सिर लगाए रो रहे होंगे। कल रात उसकी भरे बदन वाली बीवी का रोना मैंने सुना था। उधर इमामबाड़े में शामे-गरीबाँ के उनवान से तकरीरें हो रही थीं, मर्सिये पढ़े जा रहे थे, लोग नौहाख्वानी में उदास हो रहे थे, सोजख्वानी में डूबे थे और इधर ये दोनों भी अपने फूल से बच्चे की याद में बेजार रो रहे थे। वे बहुत परेशान है, मुझे उनके घर जाना ही चाहिए। मैं उठता हूँ तो देखता हूँ, 'मुहर्रम तो हो गए न चाचा, अब इस रात को बाँस क्यों छील रहे हैं?' मुझे बैठने को कह वे बोल रहे हैं, 'अगले मुहर्रम के लिए बाँस छील रहा हूँ। पहले जब सरकारी ताजिया बनता था न, तो यही करते थे हम, कि करबला से लौटे और शुरू कर दी अगले मुहर्रम की तैयारी। अब तो एक बाँस छील कर रख देते हैं...।' मैं उनकी बातें सुनता रहता हूँ पर नींद बड़ी जोर से आ रही है तो उठ जाता हूँ। बिस्तर पर जाते सोचता हूँ कि कल सुबह ही पाँचेक मिनट को हो आऊँगा, तभी बुश्शर्ट वाले बाबू के घर में से कुछ अजीब आवाजें सुनाई देती हैं - कहीं वो बेचारी माँ बच्चे की याद में पागल न हो जाए! मैं उठ कर अंदर जाता हूँ। उसके और मेरे कमरे को मिलाने वाले सदा बंद दरवाजे की सेंध में से झाँकता हूँ, जो कुछ देखता हूँ उसे देखते ही अपने-आपको उस सेंध से दूर खींच लेता हूँ। मैं सुनता हूँ, उसकी पत्नी कह रही है, 'देखो, कोई है, दरवाजा बजा रहा है।' बुश्शर्ट वाला बाबू कोई जवाब नहीं देता। मेरा मन करता है कि उस सेंध में से झाँक कर फिर देखूँ पर मन को रोक लेता हूँ क्योंकि विवाहित आदमी हूँ, मेरे लिए यह सब जिज्ञासा की बात नहीं रही।

पत्नी फिर कहती है, 'देखो, कोई है, दरवाजा बजा रहा है।'

बुश्शर्ट वाले बाबू की व्यस्त आवाज सुनाई पड़ रही है, 'कोई नहीं है। वे तो इमामबाड़े वाले चाचा हैं, अगले मुहर्रम के लिए बाँस छील रहे हैं।'

https://www.hindiadda.com/agale-muharram-ki-taiyari/